उपसंहार

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कथा-साहित्य के क्षितिज पर उभरे कथाकारों में संजीव एक प्रतिनिधि हस्ताक्षर माने जाते हैं। बहुआयामी प्रतिभा के धनी कथाकार संजीव हमेशा भीड़ से अलग चलते हुए दिखते हैं। उनकी रचनाएँ अधिकांशत श्रमजीविता पर आधारित अवश्य है पर वे कहानी की आँखों से समकालीन जीवन यथार्थ को जाँचते-परखते हैं। समकालीन हिंदी कथाकारों में वे एक परिश्रमी, ईमानदार, जिज्ञासु एवं व्यवस्था परिवर्तन के लिए बेचैन कथाकार हैं। इन्होंने अछूते संदर्भों को अपनी धारदार लेखनी से ऊँचाई प्रदान की है। वर्तमान समय के सामाजिक परिदृश्य को समझने की दृष्टि से भी उनका कथा-साहित्य बहुत महत्वपूर्ण है। वस्तुतः देखा जाय तो प्राचीनकाल से ही साहित्यिक रचनाओं में समाज प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से थोड़े-बहुत ही सही अवश्य उपस्थित रहा है, अर्थात कभी भी साहित्यिक रचनाएँ उनकी सामाजिक संदर्भों से अछूती नहीं रही हैं। परंतु वर्तमान समय में सामाजिक संदर्भ और राजनीतिक परिवेश का जितना ज्यादा प्रभाव साहित्य पर पड़ा है, उतना पहले कभी नहीं पड़ा। आज का साहित्य सौंदर्य और प्रेम की केलि-क्रिड़ा से काफी उपर उठ चुका है। इस पर आज समाज की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का व्यापक प्रभाव लक्षित किया जा रहा है और इन सारे जटीलतम समीकरणों का सरलतम व्याख्या 'साहित्य के समाजशास्त्र' के माध्यम से प्रस्तुत की जा सकती है। लेखक की अपनी सामाजिक स्थिति का प्रभाव भी उसकी रचनाओं में विभिन्न संबंधों के रूप में पड़ती है, यह भी समाजशास्त्र की ही एक विशेषता है। आज इस सच्चाई से आँखें नहीं बंद की जा सकती हैं कि साहित्य के पाठकों की संख्या में निरंतर कमी आ रही है। किसी भी रचना के लिए व्यापक पाठक वर्ग तैयार करने और उनकी दिलचस्पी उस रचना के प्रति बनाये रखने जैसे चुनौतीपूर्ण कार्य का समाधान भी मैनेजर पांडेय जैसे आलोचक साहित्य के समाजशास्त्रीय पद्धति में देखते हैं। मनुष्य जिस समाज में रहता है, सांस लेता है, उसकी आशाओं-आकांक्षाओं के अनुरूप ही अपना जीवन व्यतीत करता है। सामाजिक संबंधों में प्रवेश करके ही व्यक्ति मनुष्य बनता है और मानव समुदायों का समूह ही समाज है। मनुष्य और समाज के बीच परस्पर संबंधों का अध्ययन समाजशास्त्र नामक विषय के अंतर्गत किया जाता है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध का विषय **'संजीव के**

कथा-साहित्य का समाजशास्त्रीय अनुशीलन' है। प्रथम अध्याय में ही साहित्य के समाजशास्त्र के स्वरूप पर चर्चा है और पूरे कथा-साहित्य को समाजशास्त्रीय दृष्टि से समझने का प्रयास है।

प्रत्येक रचनाकार अपने समय की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों की देन होता है। उसकी रचनाओं पर उसकी विकासोन्मुखी चेतना, मानवीय, संवेदना और प्राकृतिक सौंदर्य का भी प्रभाव पड़ता है। संजीव का जीवन उनके व्यापक अनुभव फलक के साथ किसी न किसी रूप में उनके कथा-साहित्य में रचता-बसता है। शोध कार्य के दौरान उनके जीवन की परिस्थितियों के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उनकी तुलना उनके कथा-संसार से करने पर यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि सर्जक ने *'कागद की लेखी'* की जगह *'आँखन की देखी'* को ज्यादा महत्व दिया है। संजीव ने जिस परिवेश में जन्म लिया वह जातिगत विभेद, सामंती शोषण और आर्थिक विषमता से सड़ांध मारता ग्रामीण समाज था। गरीबी के बोझ तले दबे इनके परिवार में न कोई उच्च शिक्षा की परंपरा थी न कोई साहित्यिक विरासत। ऐसी परिस्थिति में भी संजीव ने नवीन संभावनाओं का अन्वेषण किया। संजीव ने स्वयं अपने जीवन और लेखन के बारे में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जो कुछ लिखा है या अपने मित्रों एवं आलोचकों से बातचीत के दौरान जो कुछ भी बताया है, वह सागर में मोती के समान है। **'मेरी यात्रा', 'मैं और मेरा समय', 'मैं क्यों लिखता हूँ', 'मेरी रचना प्रक्रिया'** और कुछ पत्रिकाओं में छपी उनके मित्रों एवं रचनाकारों जैसे गौतम सान्याल, नरेन, रविशंकर सिंह आदि से बातचीत से उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है। उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर जिले के बांगरकला गाँव के एक गरीब परिवार में जन्मे संजीव का बचपन अत्यंत विपन्नता में नाक-चुआता, मक्खियों की भिनभिनाहट, धूल-गंदगी में डोलता, भैंस की पीठ पर चारगाहों की सैर करते बीता। वृहत्त परिवार और सीमित संसाधन के बीच जातिगत सड़ांध से बस्साता, सामंती शोषण से उफनता एवं आर्थिक विषमता से लबलबाता ग्रामीण समाज को दारिद्रय से भरा इनका परिवार अधिक दिनों तक सहन नहीं कर पाया और जीविका की तलाश में घर के पुरुष सदस्य गाँव छोड़ने के लिए बाध्य हुए। अपने परिवार के गाँव छोड़ने की पीड़ा को उनहोंने **'पिशाच'** कहानी में व्यक्त किया है। पश्चिम बंगाल के कोयलांचल वाले क्षेत्र

कुल्टी से शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर वहीं के कारखाने में नौकरी करने से इनका आर्थिक सफर निम्नवर्ग से मध्यवर्ग की तरफ बढ़ा। इस तरह संजीव का पारिवारिक परिवेश एक तरफ ग्रामीण जनसंस्कृति को समेटे हुए है तो दूसरी तरफ महानगरीय आपा-धापी को। उनकी रचनाओं में ग्रामीण संस्कृति के साथ-साथ कस्बाई जीवन के रंग भी ठेठ और जीवंत रूप में मिलते हैं, फिर चाहे वह **'जंगल जहाँ शुरू होता है'** और **'सूत्रधार'** हो या **'सावधान! नीचे आग है'** तथा **'रह गईं दिशाएँ इसी पार'**। उनकी राह हमेशा सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के नवीन संभावनाओं से युक्त आशाओं एवं आकांक्षाओं से परिपूर्ण रहा है।

संजीव के कहानी साहित्य में गाँव के ठाकुरों का सामंती शोषण, बेरोजगारों की दुर्दशा, जातिगत-घृणा, विद्वेष, पूंजीपतियों का शोषण, दरिद्रता में पिसते मनुष्य, मानवीय जलालत, गैरबराबरी, धार्मिक आस्था, आदिवासी शोषण, औद्योगिक कस्बों, कोयलांचल में मजदूरों की दुर्दशा, अस्थायी और स्थायी ठेके के मजदूरों की समस्याएँ और ठेकेदार, मजदूर यूनियनों एवं मिल-मालिकों की मिलीभगत, वैश्वीकरण के प्रभाव में पिसता हुआ गरीब आदमी और कुटीर उद्योग, कलाकार, पुलिस, स्पेश, पहाड़, समुद्र, समतल मैदान, राजनीति, हिंदू-मुस्लिम संबंध, सगुनियों की खोज, 'हार को सिंगार' बनाकर सजाने वाले चरित्रों की शौर्य गाथा, बनस्पति शास्त्र का वर्णन, नारी शोषण, दलित शोषण आदि विषयों को यथार्थवादी ढंग से उठाया गया है। अपने समाज में फैले सामाजिक उत्पीड़न, दमन, अज्ञान, अशिक्षा, अंधश्रद्धा, धार्मिक पाखंड, आर्थिक-विषमता, गैरबराबरी से वे बार-बार अपनी कहानियों में जूझते हैं।

इनके उपन्यास साहित्य में भी पिछड़े अंचलों की त्रासदी, व्यवस्थागत विसंगतियाँ, जनजातीय अभिशप्त जीवन, बहुमुखी शोषण, लोकसंस्कृति, विस्थापन आदि संदर्भों का गहराई से अन्वेषण किया गया है। **'अहेर'** उपन्यास में सामंती पाखंड, अज्ञान, तंत्र-मंत्र, बाल-विवाह, नारी शोषण, बिरादरी की बाडाबंदी, बंधुआ प्रथा, अंधविश्वास, बलात्कार आदि से यह पिछड़ा अंचल कराह रहा है। **'सर्कस'** उपन्यास में सर्कस की बाह्य चमक-दमक और गलैमर के साथ-साथ कलाकारों की उपेक्षा, शोषण, त्रासदी एवं सर्कस मालिकों की कुटिलताएँ उद्‌घाटित की गई है। पुरुष वर्चस्व, मालिकों का अनिष्ट व्यवहार एवं यौन शोषण झेलने को

बाध्य स्त्री कलाकारों का जीवन कठपुतली के समान है। लेखक ने इन शोषित, पीड़ित कलाकारों में चेतना जगाकर आशा को जीवित रखा है। **'सावधान! नीचे आग है'** उपन्यास में खदान में काम करने वाले मजदूरों की दुर्दशा, ठेकेदारों-दलालों की कुटीलताएँ, माफियातंत्र, सूदखोर-महाजनों की क्रूरता, जायज-नाजायज में शामिल पुलिस-प्रशासन, यूनियन-मैनेजमेंट की लिपापोती आदि अंदरूनी परतों को उधेड़ कर रख दिया है। **'धार'** उपन्यास में राष्ट्रीय संपत्ति की लूट, माफिया गिरोह का आतंक, संथाल आदिवासियों की अभिशप्त जीवन एवं उनके द्वारा जनखदान निर्माण की चेतना एवं साहस, अंधविश्वास, अशिक्षा, बेरोजगारी, ओझा, तंत्र-मंत्र आदि के माध्यम से पूरे संथाल परगना का नंगा सच प्रस्तुत किया है। **'पाँव तले की दूब'** उपन्यासिका में झारखंड आंदोलन, औद्योगिकरण के फलस्वरूप विस्थापन झेलते आदिवासी जीवन, अधिकारियों, पूंजीपतियों के राजनीतिक कुटीलता के शिकार बेरोजगार आदिवासियों के जीवन यथार्थ को स्पष्ट किया गया है। **'जंगल जहाँ शुरू होता है'** उपन्यास के अंतर्गत डाकू समस्या, पुलिसिया आतंक, थारूओं की संस्कृति, भूमि का असमान वितरण आदि तथा **'सूत्रधार'** में लोक कलाकार का त्रासद जीवन तथा लोक-संस्कृति की झलक मिलती है। **'रह गईं दिशाएँ इसी पार'** में विज्ञान एवं वैज्ञानिकों का दोहन, अमरत्व, टेस्ट-ट्यूब बेबी, सेक्स चेंज, हार्मोन एफेक्ट, क्लोन निर्माण एवं रिश्तों के बनते-बिगड़ते परिपाटी पर गहराई से विचार किया गया है तथा **'फाँस'** उपन्यास में कर्ज में डूबे आत्महत्या को मजबूर किसानों की दुर्दशा का वर्णन है।

लेखक का कार्य आसान नहीं है। उसे गहन आत्मनिरीक्षण की प्रक्रिया से गुजरना होता है, अपने भीतर और बाहर की दुनिया से अपने को एकसार करना होता है, अनुभव और ज्ञान की एक वृहत्तर दुनिया अपने भीतर बनानी होती है। अपने समकालीन जटिलताओं के साथ निरंतर आँख मिचौली खेलनी होती है। तब जाकर शताधिक कहानियों और दसियों उपन्यास का सृजन होता है। परंतु इतनी रचना करने के पश्चात् भी कथाकार संजीव की रचना-लिप्सा कुंद नहीं हुई है। असंख्य किरदारों को सृजित करने के बाद भी उनके भीतर कुछ न कर पाने की कचोट है। प्रेमचंद की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले उसी तरह के व्यक्तित्व के धनी कथाकार संजीव हैं। जिंदादिली – दोस्ती, ईमानदारी, राष्ट्रप्रेम एवं नारी सम्मान उनके व्यक्तित्व

की प्रमुख विशेषता है। वे दलित, आदिवासी, शोषित, पीड़ित कामगार मजदूर, नारी, किसान, कलाकार आदि की आवाज हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी, प्रगतिशील विचारधारा के संरक्षक, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लैस इनका व्यक्तित्व एक जिज्ञासु प्रवृत्ति का है।

संजीव वैचारिक दृष्टिकोण से मार्क्सवादी हैं। समझदारी विकसित होने के शुरुआती दिनों से ही वे मार्क्सवादियों द्वारा चलाये जा रहे समाजवाद, आर्थिक समानता, सामाजिक-बराबरी की भावना से प्रेरित हुए और उसे अपनी रचनाओं का केंद्रीय भाव बनाया। संजीव विज्ञान के छात्र रहे हैं और नक्सलवाद आंदोलनों से प्रभावित भी, जिसके कारण उनकी वैचारिकता में तार्किकता और क्रांतिकारी आवेग दोनों ही देखा जा सकता है। परंपरा में इन्हें धार्मिक-अंधविश्वास, तंत्र-मंत्र और अंधश्रद्धा मिला था, जिसके चक्कर में जीवन के प्रारंभिक दिनों के कुछ समय व्यर्थ ही नष्ट हो गए। पर आज वे प्रत्येक चीज को अपनी वैचारिक दृष्टिकोण की कसौटी पर कसते हैं। अपने इस विकसित दृष्टिकोण का श्रेय वे अपने शिक्षकों, मित्रों, बड़े भाई और **'दिनमान'** पत्रिका को देते हैं। भगत सिंह के आलोचनात्मक दृष्टिकोण ने भी इनके वैचारिक दृष्टिकोण को पुष्ट किया।

संजीव जमीन से जुड़े कलाकार हैं। इनका सारा रचना कर्म सिर्फ और सिर्फ जनता को समर्पित है। ये अपने अंचल के लोगों से अपनी पहचान छुपा कर मिलते रहते हैं और उनके रहन-सहन और शैली के आधार पर अपने भीतर नये-नये किरदार गढ़ते रहते हैं। और फिर उसे अपने विचारों की चासनी में चास कर आदर्शों की कसौटी पर कसकर गढ़े गये पात्रों को लेकर एक रचना के रूप में पाठक को परोसेंगे। और जब उनका यह रचनागत आदर्शवाद वास्तविक जीवन में खंडित होता है तो रचनाकार के हृदय से एक आह निकलती है जिसे हम 1998 में रानीगंज में आयोजित **'संजीव लोक सम्मान समारोह'** में कहे गये इनके वक्तव्य से समझ सकते हैं, जहाँ इन्होंने माना कि **'आरोहण'** का भूपसिंह, **'तिरबेनी का तड़बन्ना'** का तिरबेनी, **'सागर सीमान्त'** की नसीबन, **'अपराध'** की संघमित्रा, सचिन, सिद्धार्थ, **'मैं चोर हूँ, मुझ पर थूको'** का हबीब ये स्वयं हैं। ये जनवादी कथाधार के प्रखर एवं संवेदनशील कथाकार हैं। इन्होंने दसियों उपन्यास तथा शताधिक कहानियों की रचना की है। उपन्यास के क्षेत्र में

इन्होंने प्रेमचंद और रेणु की विरासत को आगे बढ़ाया है। इनके उपन्यास साहित्य में सामंतवादी क्रूरता, धुर्त्तता, ऐय्याशी, ज्योतिष, बलात्कार, सर्कस कलाकारों का शोषण, सर्कस मालिकों की कुटिलताएँ, श्रम का अपमान, नारी कलाकारों का दैहिक और मानसिक शोषण, कोयलांचल में श्रमिकों का शोषण, माफियातंत्र, ठेकेदारी, सूदखोरी, पुलिस-प्रशासन, यूनियन मैनेजमेंट की मिलीभगत, मेहनतकश दलितों –आदिवासियों का अभिशप्त जीवन, तेजाब फैक्ट्री का विरोध, जनखदान का निर्माण, झारखंड आंदोलन, अवरोध, झड़प, गिरफ्तारियाँ, डाकू समस्या, प्राकृतिक आपदा, असमान भूमि वितरण, लोकजीवन, लोक-संस्कृति एवं लोक-कलाकारों का दर्द, जातिगत विसंगतियाँ, विज्ञान और वैज्ञानिकों का दोहन, आत्महत्या करते किसान आदि विषयों को कथ्य बनाया गया है। इनके उपन्यासों के कथ्य मौलिक एवं अनछुए संदर्भों को उद्‌घाटित करते हैं। ये उपन्यासों के अछूते संदर्भों की पड़ताल व्यापक धरातल पर करते हैं। **'धार'** उपन्यास में इन्होंने माफियातंत्र द्वारा राष्ट्रीयसंपत्ति की लूट के विरोध में आदिवासियों द्वारा जनखदान का निर्माण करवाया है, यह विचार प्रगतिशील है।

संजीव की कहानियों का भूगोल व्यापक है। उनकी कहानियों की कथावस्तु जीवन से प्रेरणा ग्रहण करती है और जीवन को प्रेरित भी करती है। सागर, पहाड़, समतल, जंगल, ग्राम, शहर, तकनीकी, स्पेश कुछ भी उनके कथा क्षेत्र से बाहर नहीं है। जीवन के विविध रूपों और उसकी यथार्थता की थाह के लिए वे विभिन्न स्थानों का भ्रमण करते हैं। इन यात्राओं के दौरान कथाकार की दृष्टि जहाँ तक जाती है वहाँ तक का जीवन यथार्थ कहानियों में उभरकर सामने आता है। साधारणतः उनकी नजर अनछुए पहलुओं को ढूँढ़ लेती है। इसलिए उनकी कहानियों में जीवन का संदर्भ अत्यंत व्यापक और प्रवाहमान दिखता है। वे कहानियों में कल्पना का समावेश तो करते हैं परंतु उसकी मूल बुनावट से छेड़छाड़ नहीं करते हैं। उनकी कहानियों में उनका कठोर श्रम दिखता है। **'टीस'** कहानी को लिखने के लिए वे सपेरों के गाँव तक गए। वे 'फिल्ड वर्क' के साथ-साथ कठिन 'होमवर्क' भी करते हैं। यात्राओं के दौरान प्राप्त सूचनाओं और ज्ञान को व्यापक अनुभव की कसौटी पर कसने के क्रम में कई कहानियों का परिप्रेक्ष्य लंबी एवं औपन्यासिक शिल्प की हो गई है। जैसे **'सागर सीमान्त', 'मानपत्र', 'लिटरेचर', 'आरोहण', 'खोज', 'जो एहि पद का अरथ लगावे'** आदि। **'आरोहण'** कहानी में ज्ञान की

अपेक्षा अनुभव की प्राथमिकता है। उनकी कहानियाँ सामाजिक, राजनीतिक सोद्देश्यता तथा नैतिकता को लेकर लिखी गई हैं। वे अन्याय बर्दास्त नहीं कर पाते हैं। तभी तो अपनी पहली कहानी संग्रह **'तीस साल का सफ़रनामा'** में बेरोजगारी, भ्रष्ट न्याय व्यवस्था, पुलिस तंत्र, आर्थिक पीड़ा, निम्नवर्ग, सामंती शोषण आदि विषयों को कथ्य के रूप में उठाया है। इनकी कहानियों में गाँव भय, हताशा और निराशा में डूबा हुआ उभरा है। गाँव के एक छोर पर सुरजा है जो आजादी के इन तीस वर्षों में किसान से मजदूर बन गया तथा दूसरे छोर पर नंबरदार गजराज सिंह है जो किसान से महाजन बन गया। **'आप यहाँ हैं'** कहानी संग्रह की अधिकांशतः कहानियाँ नारी केंद्रित हैं। **'जसी-बहू', 'कठपूतली', 'धनुष टंकार', 'आप यहाँ हैं', 'पुत्री माटी'** कहानियों में नारी शोषण के विभिन्न रूपों को परिलक्षित किया गया है। इनमें उच्च वर्ग द्वारा दलित स्त्रियों का यौन शोषण, सेठों द्वारा गरीब लड़की को रखैल बनाना, पूंजीपतियों द्वारा मजदूर स्त्रियों के साथ जबरदस्ती, मालिक द्वारा आदिवासी नौकरानी का बलात्कार एवं आर्थिक मजबूरी में नारी का खुद वेश्यावृत्ति में लिप्त हो जाना के साथ-साथ ठेकेदार, अफसर, नेता, मिल मालिक, सेठ, पुलिस की क्रूरता को कहानी का कथ्य बनाया गया है। आदिवासियों के उत्थान की विभिन्न प्रकल्पों को अधिकारियों द्वारा हजम कर जाने की बात भी इस कहानी-संग्रहों में उठाई गई है। **'भूमिका और अन्य कहानियाँ'** कहानी-संग्रह में अंधविश्वास रूढ़िवादिता, विपन्नता, अज्ञानता के कारण महामारी झेलता ग्रामीण समाज, सांप्रदायिकता, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, बाल-विवाह, दकियानुसी रीति-रिवाज, असफल प्रेम, जाति-व्यवस्था, छुआछूत, धर्मांतरण, गुंडा-तंत्र, स्वार्थपरक राजनीति आदि यथार्थवादी घटनाओं को इस कहानी-संग्रह का कथ्य बनाया गया है। **'दुनिया की सबसे हसीन औरत'** कहानी संग्रह के अंदर सत्ता के जूल्म के खिलाफ आवाज उठाने वाले संवेदनशील नक्सली युवक, सीधे-सीधे आदिवासी और उनके खिलाफ किये जाने वाली शासकीय हिंसा, पुलिस, वन-विभाग, महाजन, जमींदार की निर्दयता, भूमि समस्या, न्याय, अदालत, जज, सामंती रिश्ते, बेरोजगारी, छंटनी आदि विषयों को कथ्य के रूप में उठाया है। सब्जी बेचने वाली आदिवासी महिला को उसके श्रम और ईमानदारी के आधार पर दुनिया की सबसे हसीन औरत बताकर संजीव ने सौंदर्य की नई परिभाषा गढ़ दी है। **'प्रेत मुक्ति'** कहानी संग्रह में कथ्य के रूप में आर्थिक तंगी, भूमिहीनों

को प्रदत्त सुविधाओं पर ऊँची जाति वालों का कब्जा, अंधविश्वास, चोरी, रेलवे पुलिस, मेहनतकश वनवासियों पर सामंती अत्याचार आदि को चुना गया है। **'प्रेरणास्त्रोत और अन्य कहानियाँ'** की कथावस्तु में मुक्तिकामी और आंदोलनधर्मी नायिका का वर्णन है। पहले की कहानियों की तरह अब नारी सिर्फ सहती नहीं है बल्कि अपने स्वाभिमान और अधिकार के लिए संघर्ष करती है। **'ब्लैक होल'** कहानी संग्रह की कहानियों का कथ्य मध्यवर्गीय आकांक्षाओं, भौतिकवादी सुख-सुविधाओं के पीछे अंधी दौड़ है। वैश्वीकरण के इस दौर में बाजारवाद का प्रभाव, उपभोक्तावादी संस्कृति, अपने बच्चे को अव्वल देखने की चाहत, हमेशा सर्वोत्तम की इच्छा के दुष्परिणामों को भी लेखक रेखांकित कर देना चाहता है। प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास का प्रभाव यह है कि आज बाजार हमारी जरूरतों को तय करता है। नैतिक पतन का काउंट-डाउन शुरू हो चुका है। कन्फेशन कहानी में राष्ट्रीयकरण की आड़ में अघोषित निजीकरण की लड़ाई है। **'खोज'** कहानी संग्रह की कहानियों में स्वार्थी, धूर्त्त और अवसरवादी कलाकार, सेठ, साहूकार, राजा, सगुनिये, नक्सलवादियों के जीवन को कथ्य का आधार बनाया गया है। इस प्रकार संजीव ने भिन्न-भिन्न विषयों को कथावस्तु का आधार बनाकर कहानियों का ताना-बाना बुना है। उनकी कहानियाँ, भाषा-शैली, संवाद शिल्प की दृष्टि से भी श्रेष्ठ है।

संजीव के कथा-साहित्य में समाजार्थिक चिंतन के अंतर्गत जाति और वर्णभेद, अस्पृश्यता, सामंती पूंजीवादी व्यवस्था, भ्रष्ट न्याय व्यवस्था, नारी संवेदना, निर्धनता, बेरोजगारी, अर्थ कमाने की समस्या, आर्थिक शोषण, अशिक्षा, महाजन द्वारा शोषण, पारिवारिक शोषण, यौन शोषण आदि समस्याओं को यथार्थपूर्वक ढंग से उठाया गया है। संजीव के कथा-साहित्य में गरीबी को सबसे बड़े बीमारी के रूप में रेखांकित किया गया है। आज भी देश के बहुत सारे आदिवासी, दलित, निर्धन वर्ग भूखे सो रहे हैं। स्वास्थ्य सेवाएँ और शिक्षा इनसे कोसों दूर हैं। इनके बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। जीवन की न्यूनतम जरूरतें रोटी, कपड़ा और मकान भी इनके नसीब में नहीं हैं। महामारी कहानी में गाँव की गरीबी में लिपटी रंगई बहू की छः वर्षीय पुत्री है जो अपनी उल्टी को कटोरे में काछ-काछ कर रख रही है, फिर से खाने के लिए। तेल खर्च के अभाव में यहाँ बुढ़ियाँ, प्रौढ़ाएँ और नौ-नौ साल की बच्चियाँ तक मुंडन करवा लेती हैं। ग्रामीण भारत की गरीबी की यह तस्वीर हृदय विदारक है। शहरी क्षेत्रों में आज भी बच्चों

को कुड़ा-करकट बीनते, कबाड़गीरी करते, दुकानों पर कप-प्लेट धोते और जूठन चाटते हुए देखा जा सकता है। इन कुड़ों में मौजूद कई प्रकार के विषैले पदार्थों के बीच रासायनिक प्रतिक्रिया का खतरा हमेशा बना रहता है, जिससे ये बच्चे विभिन्न प्रकार की बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। सामाजिक सुरक्षा के निश्चित उपकरण न होने के कारण इनका शारीरिक और मानसिक शोषण भी होता है। **'लांग साइट'** कहानी में महिलाएँ स्टीम इंजनों की फेंकी छाई से कोयला चुनकर बेचती हैं और अपना गुजारा करती हैं। **'चाकरी'** कहानी में कथानायक अपनी ही बिरादरी द्वारा प्रताड़ित होकर गाँव छोड़ता है। हावड़ा में आकर प्लेटफार्म के किनारे रहने लगता है। उसके पिता किसी होटल में टेबुल पर कपड़ा मारने का और माँ जूठे बर्तन मलने का काम करती है जबकि वह स्वयं बेलून, बादाम, अखबार बेचने से लेकर बूट पॉलिश करने और टैक्सियाँ पोंछने वाले बच्चों के दल में शामिल हो जाता है। **'जंगल जहाँ शुरू होता है'** उपन्यास में बिसराम के घर में अन्न का एक दाना भी नहीं है तो **'धार'** उपन्यास में नायिका मैना को सस्ता सामान ढँढ़ने के क्रम में कई दूकानों से भिखमंगों की तरह दुरदुराया जाता है। विकास की इस दौड़ में तकनीक को बढ़ावा मिला जिसके कारण रोजगार के अवसर भी सीमित हुए। खेती में ही ट्रेक्टरों, हारवेस्टरों एवं कटाई मशीनों के प्रयोगों ने बहुत से खेतीहर मजदूरों के अवसरों को निगल लिया। कुटीर उद्योग धीरे-धीरे वृहत्त उद्योग के प्रभाव में विलुप्त होते जा रहे हैं। हमारे देश में शिक्षित बेरोजगारों की एक बड़ी फौज तैयार हो गई है। चारों तरफ भ्रष्टाचार, सिफारिश और रिश्वत का बोलबाला है, जिसके कारण मध्यवर्ग का जीवन अशांति, कलह, असंतोष और संघर्ष से भर रहा है। **'धार'** उपन्यास में बिहार के संथाल परगना में कारखानों और कोयला खदानों की भरमार होने के बावजूद यहाँ के लोगों के पास जीविका का कोई निश्चित साधन नहीं है। ठेकेदारी, अवैध खनन, भ्रष्टाचार, शोषण ने संथाल आदिवासियों के श्रम को आर्थिक दुर्दशा में परिणित कर दिया है। **'जंगल जहाँ शुरू होता है'** उपन्यास में काली पहले चीनी मिल में मजदूरी, ठेकेदार के पास मजदूरी, हलवाही सब करता है और अंत में बेरोजगारी का दंश उसे अपराध के क्षेत्र में धकेल देता है और वह डाकू बन जाता है। **'फूटबॉल'** कहानी में नौकरी के लिए रिश्वत मांगा जाता है तो **'क़िस्सा एक बीमा कंपनी की एजेंसी'** में कथानायक फ़ियरलेस का एजेंट बन जाता है। **'चुनौती'** कहानी में तो

बेरोजगारी की यह स्थिति अपने चरम पर पहुँच जाती है जहाँ एक पिता अपने पुत्र को नौकरी दिलाने के लिए काम करते-करते खुद मर जाने की बात सोचता है ताकि उसकी जगह उसके पुत्र को नौकरी मिल सके। बेरोजगारों को नौकरी देने की सरकारी वादे हवा-हवाई हैं और गरीबी, भूख से मौतें अनवरत जारी हैं। सामाजिक भेदभाव, वर्णीय एवं वर्गीय विसंगतियाँ भी निर्धनता का एक प्रमुख कारण हैं। समाज में गरीबों को तथा इनके पेशे को उपेक्षा की नजर से देखा जाता है। **'सूत्रधार'** उपन्यास में सवर्ण समाज यह कहकर कि जाति भगवान की ही बनाई हुई चीज है, इसे छुपाना नहीं चाहिए, अपनी जाति अनुसार कर्म करना चाहिए, दलितों में भय पैदा करता है परंतु **'जब नशा फटता है'** कहानी में एक शिक्षित दलित युवक इस बात का खंडन करता है। मेहतर समाज के लोग अब यह समझ चुके हैं कि उनके ऊपर हिंदू धर्म का नशा चढ़ाकर उन्हें भ्रम में रखकर उनसे सेवा लेना ही सवर्ण समाज की मानसिकता है। वास्तव में उनकी स्थिति पशुओं से भी बदत्तर है जहाँ गाय की तो पूजा होती है किंतु उन्हें गोबरैला समझकर उनसे घृणा किया जाता है। राजनीतिक पार्टियाँ भी अलग-अलग जातियों की अलग-अलग मीटिंग बुलाकर, उन्हें उनके जाति-बोध पर गर्व महसूस करवाकर, जाति-प्रथा को बनाये रखने की प्रेरणा देकर, उन्हें चुतिया बनाती हैं। संजीव यह मानते हैं कि आज सामंती-समाज का ढाँचा भले ही चरमरा रहा हो लेकिन सवर्ण समाज अपने झूठे अभिमान में इसे इतनी आसानी से स्वीकार करेन वाला नहीं है। तभी तो **'पिशाच'** कहानी में महातम बाबा द्वारा अपने नाती को नौकरी लगा देने की सिफारिश पर जब कथानायक उसे अपने यहाँ गाँव में ही काम देने की बात करता है तो वह आग-बबूला हो जाते हैं और कथानायक को उसकी जातिगत हैसियत स्मरण करवाते हैं। सवर्ण समाज जातिभेद की इस गहरी खाई को पाटने के लिए तैयार नहीं है। संजीव ने थोड़ा शक्ति, धन और वैभव पाकर बभनपने में समाते जा रहे दलित समाज की भी टोह ली है। **'योद्धा'** कहानी में संजीव इस बात से चिंतित दिखते हैं कि थोड़ी-सी शक्ति और सामर्थ्य पाकर दलित समाज आज उसी 'बभनपने' में समाया जा रहा है, जिसका वह सदियों से शिकार रहा है। अपने नीचे के दलित भाइयों को वे भूलते जा रहे हैं और उनके संघर्ष में साथ देने के बजाय उन्हें पंगु बना रहे हैं। संजीव ने अपने कथा साहित्य में जमींदारों द्वारा जबरन कब्जियाये गये जमीनों, पशुओं का जिक्र किया है, उन्हें न्याय के लिए

भूखे पेट अदालत दौड़ना है, जबकि न्याय साक्ष्य-सापेक्ष है, सत्य-सापेक्ष नहीं और साक्ष्य सामर्थ्यवान लोगों की दासी है। यहाँ न्याय के नाम पर प्रहसन है। निचली अदालतों में वर्षों से लटके पड़े मामले, सबूतों और गवाहों के अभाव में शक्तिविहीन जज, बहसबाजी कला में निपुण वकीलों का आपसी द्वंद्व, न्याय की अपेक्षा में व्याकूल साधारण जनता, चाँदी काटती हुई नकली गवाहों की टोलियाँ और शिकार फँसाते हुए वकीलों के दल, हमारे लोकतंत्र की पोल खोलते हैं। संसद में नारी आरक्षण का बिल भी तीन-चार दशकों से झूल रहा है। संजीव ने अपने कथा-साहित्य में हमेशा स्त्री को मान-सम्मान देने का प्रयास किया है परंतु पुरुष के भोगवादी मानसिकता को भी रेखांकित करते हैं। **'सागर सीमान्त'** कहानी की नायिका नसीबन ताउम्र समुद्र में खोये अपने पति का इंतजार करती है परंतु जब वह मिलता है तो उसकी दूसरी शादी और उससे संताने भी हो चुकी होती हैं। **'अन्तराल'** कहानी की नायिका स्वयं बदचलन का दाग सहती है पर अपने भावी पति के इज्जत पर आँच नहीं आने देती है। **'फैसला'** कहानी में वकील चौबे तीन तलाक को पुरुष प्रधान समाज द्वारा नारी शोषण का एक हथकंडा मानते हैं। जबकि **'घर चलो दुलारी बाई!'** कहानी में दुलारी बाई के पति की मृत्यु के पश्चात् उसके देवर और भसूर उस पर कुदृष्टि रखते हैं। इस तरह संजीव के यहाँ अत्याचार, अनाचार, शोषण के विरुद्ध आवाज मुखर करने वाली नारियाँ ही दुनिया की सबसे हसीन औरत हैं। अतः संजीव के कथा-साहित्य अपने समय की अधिकांश ज्वलंत समस्याओं को उठाते हुए उसे मानवकी विमर्श की धरातल पर लाती हैं। वे अपने कथा-साहित्य में जनता की समस्याओं के प्रति चिंतित दिखते हैं। पाठकों के अंदर वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा समाजशास्त्रीय विमर्श का संचार करते हैं।

प्रकृति, परिवेश या भौगोलिक सीमाओं का वर्णन किसी भी कथा-साहित्य को सजीवता प्रदान करता है। आंचलिक कथा-साहित्य में तो यह लगभग सार्वभौम सत्य है कि किसी निश्चित क्षेत्र विशेष या अंचल विशेष के जीवन सत्य को ही उजागर किया जाता है। संजीव भी अपने उपन्यासों में किसी व्यक्ति की कथा कहने के बजाय अंचल या किसी निश्चित क्षेत्र विशेष की कथा कहते हैं। वे अंचल की समस्याओं या संदर्भों को यथार्थ के धरातल पर स्पष्ट करते हैं। 'अंचल' शब्द अंग्रेजी के 'रीजन' शब्द का पर्याय है जिसका अर्थ किसी विशिष्ट भू-

भाग से है। यह मूलतः संस्कृत का शब्द है जो 'अंच्' धातु में 'अलच' प्रत्यय के योग से बना है। कुछ आलोचकों के अनुसार यह अंचल विशेष ग्राम या शहर कुछ भी हो सकता है किंतु परंपरा पर ध्यान दें तो आंचलिक उपन्यास मुख्यतः ग्रामीण होते हैं। परंतु प्रेमचंद के उपन्यास ग्रामीण जीवन पर आधारित होकर भी आंचलिक नहीं हैं। कुछ आलोचक तो आंचलिकता में नगरबोध के प्रवेश को ग्रामीण जीवन से सीधा टकराहट मानते हुए इसे आंचलिकता के प्रभावहीन होने का कारण मानते हैं। इसलिए आंचलिक कथा-साहित्य में किसी विशेष भू-खंड के वातावरण, परिवेश, जन-जीवन के साथ जीवन-संदेश को इतना यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया जाता है, जिसके बल पर वह वस्तु उस क्षेत्र या अंचल विशेष का रहकर भी समस्त देश का हो जाता है। यह वर्णन इतना स्पष्ट होना चाहिए कि ग्रामीण जीवन का दुःख, दर्द, वेदना, प्रेम, दारिद्रता, जीवटता आदि स्पष्ट झलके। अंचल विशेष अर्थ में वह है जिसका खान-पान, रहन-सहन, बोल-चाल, आभूषण, जाति-पंचायत, वेश-भूषा, बोली-भाषा एक हो। उनके वैवाहिक रस्म-रिवाज, पूजा की विधियाँ, कुल देवता, लोक-संस्कृति, लोकगीत, लोक-कथायें, पर्व-त्योहार आदि में पारंपरिक समानताएँ हों। इस प्रकार की माटी की महक और सजीव चित्रण लिए हुए वातावरण से अटा पड़ा है संजीव का कथा-साहित्य। **'धार'** उपन्यास में बिहार के संथाल परगना के कोयला अंचल में काम करने वाले श्रमिकों की व्यथा-कथा है। उपन्यास के केंद्र में प्रचुर खनिज संपदा से सम्पन्न संथाल परगना का अंचल है जिसके बावजूद यहाँ के आदिवासियों का जीवन विपर्यय है। **'सावधान! नीचे आग है'** उपन्यास में कथाकार ने झरिया शहर के गलियों-उपगलियों, जमी भीड़, कोक-प्लांट, कोलियरियों के टॉप-गीयर, कोयले के मलबे, ट्रकों की कतार से अंचल विशेष के चित्रण के माध्यम से यह संकेत दे दिया है कि इन्हीं भौगोलिक स्थितियों के अनुरूप वहाँ के लोगों का जन-जीवन उपन्यास में चित्रित होगा। **'जंगल जहाँ शुरू होता है'** उपन्यास में भी बिहार के चंपारण अंचल की समस्याओं का वर्णन है। **'सूत्रधार'** उपन्यास में भोजपुरी अंचल के लोकगीतों के माध्यम से जीवन की प्रत्येक अवस्था हर्ष-विषाद, आशा-निराशा, सुख-दुख, जीवन-मृत्यु, संस्कार, श्रम, त्योहार, ऋतु की अभिव्यिक्ति आदि का वर्णन किया गया है। सामूहिक नृत्य, गीत, मांझी गीत, बारहमासा, मेले के गीत, पारंपरिक छठ गीत, पहाड़ी गीत के साथ सामाजिक परिष्कारों के गीतों का चित्रण

संजीव के कथा-साहित्य में मिलता है। शोध-प्रबंध के प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत आंचलिकता का अर्थ, परिभाषाएँ, आंचलिकता का महत्व, आंचलिकता और यथार्थ, भौगोलिक स्थिति का वर्णन, भारतीय संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूष, रीति-रिवाज, खाप-पंचायत, आभूषण, लोक-संस्कृति, लोककथा, लोकगीत, लोकविश्वास, स्थानीय बोली, मेला आदि का विस्तृत एवं यथार्थवादी ढंग से चित्रण किया गया है।

इस निराशापूर्ण संघर्षमय जीवन में ऊर्जा का संचार करते हैं आंचलिक उपन्यास। किसी विशेष भू-भाग के अविकसित, अशिक्षित जनजातियों के जीवन में प्रगति, उत्साह एवं उन्नति की आशा जगाते हैं यह आंचलिक उपन्यास। जीवन जीने की कला सिखाते हैं यह आंचलिक उपन्यास। समय और परिस्थितियों के गहरे दबाव ने आज आंचलिक जीवन को भी अत्यंत जटील और कठिन बना दिया है। ऐसी स्थिति में दिनभर के हाड़तोड़ मेहनत के बाद किसान, मजदूर, बिरहा, चैता, सोरठी बृजभार, रामलीला इत्यादि लोक-संगीत, लोककथा और लोक नाटकों में अपने गम को गलाते रहते हैं। यह उनकी जीवटता का परिचायक है। संजीव ने बहुत ही गहराई से आंचलिक प्रदेशों का भ्रमण एवं निरीक्षण किया है, तब यह उनके कथा-साहित्य में परिलक्षित हुआ है। परिणामस्वरूप इसमें आदिवासियों का लोकजीवन अपने विभिन्न संस्कारों के साथ सूक्ष्मता से प्रकट हुआ है।

भूमंडलीकरण ने पूरे विश्व को एक बाजार में परिणित कर दिया है और यह बाजार ही आज पूरे विश्व की अर्थव्यवस्था को नियंत्रित कर रहा है। इस पर अब किसी का नियंत्रण नहीं है, जिसके कारण बाजार पर कुछ बहुराष्ट्रीय कंपनियों का एकाधिकार बढ़ता जा रहा है। लघु और कुटीर उद्योग उनसे प्रतिस्पर्द्धा न कर पाने की स्थिति में लुप्त होते जा रहे हैं। आज बाजार में उत्पादों की कमी नहीं है, परंतु इन उत्पादों को खरीदने की कुबत लोगों में नहीं है। महाजनी सभ्यता का विस्तार है यह भूमंडलीकरण। बैंकों के तरह-तरह के क्रेडिट कार्ड, डेविड कार्ड, वीसा कार्ड, लोन जैसे लुभावने ऑफर हैं। आज व्यक्ति खुद अपनी जरूरतों को तय नहीं करता बल्कि बाजार उसकी जरूरतों को तय करता है। यह बाजार बहुत कठोर है, वह किसी भी कीमत पर सिर्फ और सिर्फ मुनाफा चाहती है। ये बाजारवादी संस्कृति हमें विश्व सुंदरी

प्रतियोगिता के नाम पर स्त्री-अंग प्रदर्शन, शराब, सेक्स और ग्लैमर के मकड़जाल में उलझा कर गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, अशिक्षा जैसे प्रश्नों से हमारा ध्यान भटका दे रही है। आज जो आर्थिक नीति लागू की जा रही है, उसका उद्देश्य मुनाफा का निजीकरण और नुकसान का राष्ट्रीयकरण करना है। आज व्यक्ति, समाज, साहित्य, संस्कृति, सभ्यता, भाषा कुछ भी बाजार से बाहर नहीं है। आज एक देश से दूसरे देश का संबंध अच्छा, बुरा या अच्छा, बुरा तो कितना अच्छा, बुरा होगा यह एक-दूसरे देश के आयात-निर्यात संबंध पर निर्भर है। वैश्वीकरण की इस कठिन चुनौती के बीच हमारी भाषा और संस्कृति के भी नये अंतराष्ट्रीय आयाम उभर कर सामने आ रहे हैं। आज हम अधिकांशतः अंग्रेजी मिश्रित हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं। परंतु इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि आज भारत के बाहर विश्व के सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ी एवं पढ़ाई जा रहा है। आज किसी देश पर हमला करके उसे उपनिवेश बनाने की आवश्यकता नहीं है बल्कि वैश्वीकरण के माध्यम से ही अमीर देश तीसरी दुनिया के देशों को आर्थिक गुलाम बना रहे हैं। विश्वबैंक जैसी संस्थाओं की नीतियाँ भी निरपेक्ष नहीं हैं।

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य को परिभाषित एवं विश्लेषित करती इनकी कुछ प्रमुख कहानियाँ **'क़िस्सा एक बीमा कंपनी की एजेंसी का', 'खोज', 'नस्ल', 'ट्रैफिक जाम', 'ब्लैक होल', ' जो एहि पद का अरथ लगावे', 'हलफनामा', 'आहट'** इत्यादि हैं। मध्यवर्गीय उपभोगवादी नजरिये का तीव्र विरोध उनकी पहली कहानी **'क़िस्सा एक बीमा कंपनी की एजेंसी का'** में है, जहाँ बीमा कंपनी के एजेंट में कार प्राप्त करने की इच्छा सुविधा लोलुपता के कारण है। यह सुविधा लोलुपता युवा समाज को संवेदनहीन बना रही है और वे आपस में भयानक प्रतिस्पर्धा का शिकार हो रहे हैं। पिछले तीन-चार दशकों में यह प्रवृत्ति खतरनाक ढंग से बढ़ी है। **'जे एहि पद का अरथ लगावे'** कहानी में मानव का विकास उसका शोषण, आदिम युग से लेकर आवारा वित्तीय पूंजी के युग तक ग्रामीण आम जनता के जीवन यथार्थ को समझने का प्रयास है। उपनिवेशवाद, पूंजीवाद, सूचना क्रांति, बाजारवाद, शेयर बाजार, विश्व सुंदरी प्रतियेगिता, विज्ञापन युग सब इस कहानी के अंग हैं। **'खोज'** कहानी तथा **'रह गईं दिशाएँ इसी पार'** उपन्यास में प्रतिभा पूंजी के यहाँ बंधक पड़ी है। उपन्यास में पूंजीपति विस्नु

बिजारिया अपने पूंजी के बल पर देश के प्रतिभावान वैज्ञानिकों को अपने निजी लैब रूपी हरम में सजा रखा है जिसका उपयोग वह अपने हितों के लिए करता है। **'ब्लैक होल'** कहानी उपभोक्तावादी संस्कृति के दौर में मनुष्य के गर्त में मिल जाने की कथा है। एक मध्यवर्गीय परिवार की बढ़ती हुई आकांक्षाएँ, इच्छाएँ और भौतिक सुख-सुविधाओं के पीछे अंधी दौड़ है। इस कहानी में एक सामान्य गृहिणी अपने करोड़पति पड़ोसियों से प्रतिस्पर्धा करती है और उपभोग की सारी सामग्री न जुटा पाने की स्थिति में अपने पति को 'डल' कहती है। शिक्षा में टॉप पर देखने की लालसा में वह अपने छोटे से बेटे अंकुर के उपर पढ़ाई का इतना बोझ डाल देती है कि उसे रेस का घोड़ा बना देती है। अंततः फिजिक्स की परीक्षा में एक न्यूमिरिकल हल न कर पाने के कारण 'अंक' आत्महत्या कर लेता है। **'हत्यारा'** कहानी में प्रदीप के पिता आई. आई. टी. और एम.बी.ए. पास अपने पुत्र को जीनियस नहीं अपितु क्रितदास मानते हैं। अपने कुटनीतिक मरणफाँस में छोटे उद्योगों और चालीस वर्ष से अधिक उम्र के मजदूरों के नौकरी खा जाने वाले अपने सी.ई.ओ. बेटे को वह पूंजीपतियों का ज़रखरीद गुलाम और मजदूरों का हत्यारा करार देते हैं। **'नस्ल'** कहानी में भी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ मध्यवर्गीय प्रतिभा को खरीद कर उसका उपयोग अपने हित में कर रही हैं। जिस प्रतिभा का उपयोग परिवार, समाज, राष्ट्र, जाति या दुनिया की बेहतरी के लिए हो सकता था, वह बनिया का कारोबार बढ़ा रहा है। उसके पास माँ, पिता, बहन, बहनोई, समाज के लिए अवकाश नहीं है, वह बाजार की अंधी दौड़ में शामिल हो चुका है। **'हलफनामा'** और **'आहट'** जैसी कहानियों में सूचना और प्रौद्योगिकी के विकास में और मजबूत होती बाजारवाद की ओर संकेत है। इसने कला और श्रम को खतरे में डाल दिया है। **'लिटरेचर'** कहानी में बाजारवाद इस कदर हावी है कि दवा पहले बनता है और उस दवा के लिए रोग गढ़ने का प्रचार-प्रसार बाद में भाड़े के किसी लिटरेचर से करवाया जाता है। अतः संजीव की आरंभिक कहानियों से लेकर अंतिम दशक तक की कहानियों में बाजारवाद और उससे उपजे गहरे संकट पर विचार-विमर्श है। वह पाठक को आत्मलोचन के लिए विवश करती हैं।

साहित्यकार संजीव ने अपनी लंबी साहित्यिक यात्रा में हर नयी कृति के साथ अपनी भाषा और शैली का अतिक्रमण किया है। भाषा-शिल्प की दृष्टि से उनका कथा-साहित्य काफी

समृद्ध है और अलग से एक गहन विवेचन की मांग करती है। उन्होंने अपने संवेदनाओं को शिल्प का जामा पहनाकर उसमें प्राण-प्रतिष्ठा कर पाठकों के सामने प्रेषित किया। रचनाकार अपनी रचनाओं को पाठकों तथा श्रोताओं तक पहुँचाने के लिए साहित्यिक संदर्भ में जिस सशक्त और अर्थवान माध्यम का प्रयोग करता है, वह भाषा है। आंचलिक शब्द, मुहावरे, लोकोक्ति, मिथक, बिंब, प्रतीक इत्यादि भाषा के उपादान हैं जो कथ्य को अर्थवान और संप्रेषणीय बनाते हैं। भाषा को स्थानीय बोली के संपर्क में लाकर उसमें जान फूँक देते हैं। एक-एक शब्द को माप-तौल कर कथा-साहित्य में रखते हैं। समाज के अधिकांशतः जन-जीवन तक अपने कथा-साहित्य को पहुँचाने के लिए कहीं-कहीं वे भाषा, व्याकरण का भी अतिक्रमण करते हैं, लोकभाषा और गालियों के प्रयोग से भी नहीं हिचकते हैं। संजीव का भाषा पर बेजोड़ पकड़ है। उनकी भाषा में लोक-जीवन और लोकतत्व रचता-बसता है। लोकभाषाओं और मानक भाषा के मेल से एक सजीव, सार्थक, यथार्थवादी और व्यंजक भाषा का निर्माण होता है। इसका कारण यह है कि कथाकार का जन्म गाँव में हुआ और जीवन का अधिकांश समय औद्योगिक कस्बेनुमा शहर कुल्टी में बीता। कारखाने में कार्य करते समय अलग-अलग प्रदेशों से आए अलग-अलग बोली-भाषा के लोगों से इनका साक्षात्कार हुआ। बीच-बीच में गाँव जाया करते थे। इसलिए इनकी भाषा में ग्रामीण जीवन की सादगी, देसीयता, आंचलिकता एवं विभिन्न लोकभाषाओं का ठेठपन मिलता है। महानगरीय कृत्रिमता और अभिजात्य संस्कृति से इनकी भाषा दूर है। इनकी भाषा सीधे-सीधे पाठक से संवाद करती है। भाषा में जीवंतता है, जिसकी धड़कन पाठक के हृदय में महसूस की जा सकती है। पात्रों एवं परिवेश के अनुकूल भाषा बोलने से कभी-कभी अलग-अलग क्षेत्रों के पाठकों के लिए अबूझ होने का खतरा भी बना रहता है। इसलिए शब्दों की गहरी सोहबत में रहकर, भाषा को गहरे रूप से जीकर, चरित्रों और पाठकों के बीच संवाद सेतु का निर्माण करना भी रचनाकार की कलात्मक क्षमता का परिचायक है। शब्द योजना को सफल बनाने के लिए इन्होंने संस्कृत, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, अंग्रेजी-हिंदी के भ्रष्ट शब्द, जोड़े के साथ आये शब्द, द्विरुक्ति शब्द, ध्वन्यात्मक शब्द, डैस वाले शब्द, बांग्ला, भोजपुरी, अवधी, मगधी आदि शब्दों का एवं भाषा सौंदर्य के लिए उपमान, लोकोक्तियों, कहावतों, मुहावरों आदि का सार्थक प्रयोग किया है। कथा भाषा के संबंध में

संजीव का स्वयं मानना है कि किसी भी लेखक के सामने भाषा के स्तर पर चुनौतियाँ होती हैं। अव्वल तो वह जो कथा कह रहा है उसे एकमेक हो, दूसरे वह भाषा अपनी संपूर्ण कला-सामर्थ्य के साथ संप्रेषणीय भी हो। कथाकार अपनी कहनी की अंतर्वस्तु जिस समाज से लेता है, उस समाज के प्रति जिस भाषा में वह रचता है, उस भाषा के प्रति और उसकी अपनी वाणी, संस्कार, दबाव, सपने सबके प्रति उसका दायित्व होता है। पात्रों एवं पाठकों की बोली में भिन्नता हो सकती है। ऐसी स्थिति में भाषा की कलात्मकता को बचाये हुए एक ऐसी भाषा को साधना जो पाठकों के लिए अबूझ न हो सचमुच एक टेढ़ी खीर है। परंतु संजीव ने मूल भाषा का एहसास और बोध की पारदिर्शता को बनाये रखा है।

भाषा की तरह उनकी शैली भी कथ्यानुरूप है। वे एक प्रयोगधर्मी कथाकार भी हैं। उनको इस बात की चिंता है कि प्रकृति के जैसे रूप, रंग, एवं गंध, ध्वनियाँ हैं, वैसी ताजगी रचनाओं में क्यों नहीं आती? अर्थात उनका उद्देश्य यथार्थवादी, जीवंत और विश्वसनीय अभिव्यंजना प्रस्तुत करना है जो पाठकों के मानस पटल पर अपना प्रभाव छोड़े। संजीव की कहानियों में नई-पुरानी, प्रचलित-अप्रचलित सभी शिल्प का प्रयोग कथानुरूप हुआ है। आत्मकथात्मक, वर्णनात्मक, महागाथात्मक, संवाद, साक्षात्कार, मनोविश्लेषणात्मक, प्रबंधात्मक, व्यंग्यात्मक, फैंटसी, डायरी, पत्र, भाषण इत्यादि शैलियों का प्रयोग कलात्म ढंग से हुआ है। उनकी कहानी **'संतुलन'** साक्षात्कार शैली में लिखी गई है तो **'मानपत्र'** पत्र शैली में। **'दास्तान एक चमन की'** में प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग है तो **'घर लौट चलो दुलारी बाई'** में संबोधन शैली का। 'सागर सीमान्त' लोककथात्मक शैली में तो **'खोज'** प्रबंधात्मक शैली में लिखी गई रचना है। **'प्रेत मुक्ति'**, **'धुँआता आदमी'** में फैंटसी शैली तथा **'सावधान! नीचे आग है'** उपन्यास में फ्लैश बैक पद्धति का प्रयोग किया गया है। उनके कथा-साहित्य को किसी निश्चित खाका में बाँध कर रख पाना संभव नहीं है। **'सावधन! नीचे आग है'** का कथ्य फ्लैशबैक, वर्णनात्मक, नाटकीय और डायरी शैली में तथा 'सूत्रधार' जीविनीपरक उपन्यास की शैली में विकसित हुआ है। **'पाँव तले की दूब'** शिल्प की दृष्टि से एक उन्नतशील उपन्यासिका है। इस प्रकार इनके कथा-साहित्य का शिल्प क्रमशः सुदृढ़ होता जाता है।

अत: संजीव के पात्र जितने जीवंत हैं उनकी भाष भी उतनी ही जीवंत है। वे उस परिवेश की भाषा को हू-ब-हू उतारने में पूरी तरह सफल हैं जिसमें उनके पात्र सांस लेते हैं। यही कारण है कि उनके कथा साहित्य में अंग्रेजी, बांग्ला, संथाली आदि शब्दों का प्रयोग धड़ल्ले से मिलता है। उन्होंने कथानुरूप नई-पुरानी, प्रचलित-अप्रचलित सभी शैलियों का प्रयोग किये हैं।

स्थापनाएँ

1. नये-नये कथा क्षेत्रों की तलाश- मैदान, पहाड़, समुद्र, स्पेस, गाँव, शहर, कस्बा, सामंत, सेठ, मजदूर, अनछुए अंचल, उपेक्षित लोककलाकार, सर्कस, कोयलांचल, झारखंड-आंदोलन, शोध, अमरत्व, टेस्ट ट्यूब बेबी आदि को विषय बनाकर उन्होंने समकालीन यथार्थ को पूरे परिप्रेक्ष्य में उद्‌घाटित करने का प्रयास किया है।

2. उपेक्षित और अभिशप्त संदर्भों को अपनी लेखनी से वाणी दिया – दलित, उपेक्षित और अछूत लोग, आदिवासी, किसान, कलाकार के पक्ष में खड़ा होकर अन्याय, अत्याचार, हिंसा, अपराध, उत्पीड़न, अवसरवादिता, अराजकता, भ्रष्टाचार, सूदखोरी, माफिया तंत्र, ठेकेदारी, सरकारी संपत्ति की लूट आदि विषयों को उद्‌घाटित किया।

3. हार या जीत की परवाह किए बिना जूल्म के खिलाफ लड़ना ही बहादुरी है। इनके यहां हार भी ृंगार है।

4. कठिन फिल्डवर्क और होमवर्क के कारण कहानियों में पाठकों को बांधे रखने और प्रभावित करने की अद्‌भुत क्षमता है।

5. दुहराव का जोखिम उठाकर भी समसामयिक समस्याओं को उठाना, परन्तु कहीं भी दुहराव बोझिल नहीं है।

6. साहित्य को अश्लीलता से दूर रखना, साहित्य के स्तर को बचाने के लिए हंस के संपादक राजेंद्र यादव पर भी उंगली उठाने से नहीं हिचकते हैं।

7. समस्याओं को उजागर करने के साथ-साथ उसके समाधान भी बताया है जैसे डाकू समस्या के मूल में असमान भूमि-वितरण-प्रणाली और बेरोजगारी है।

8. वे समाज में परिवर्तन लाना चाहते हैं और इसके लिए आंदोलन, संगठन और विरोध का स्वर ही उनका प्रमुख हथियार है।

9. इनकी कहानियों में सूचनाएँ बहुत अधिक है परन्तु वे कहीं भी कथा रस को बाधित या पाठक को आतंकित नहीं करती हैं।

10. विज्ञान का छात्र होते हुए भी उन्होंने हिंदी साहित्य में मौलिक योगदान दिया यह उनकी विशेषता है।

11. इनके यहां अन्याय शोषण के खिलाफ विरोध का स्वर मुखर करने वाली नारी ही दुनिया की सबसे हसीन औरत है, युवती के रूप सौंदर्य, उम्र, नैन नक्श का कोई अर्थ नहीं है जो इन्हें औरों से अलग करता है। 'दुनिया की सबसे हसीन औरत' कहानी हिंदी साहित्य में अपने तरह की एक अलग और अकेली कहानी है। 'कठपुतली' की नायिका, सेठ की रखैल कल्याणी दी सेठ से पत्नी का दर्जा माँगती है अर्थात् इनके स्त्री पात्र अपनी अस्मिता के लिए लड़ते हैं।

12. अंतर्वस्तु की दृष्टि से इनकी कहानियां एक विशेष प्रवृति रखती है, जो इन्हें औरों से अलग करती है। वे अपने कथा-साहित्य में विलुप्त हो रही शौर्य की परंपरा को तलाशते हैं। 'प्रेरणास्त्रोत' कहानी में लेखक की कल्पना और यथार्थ के संयोग से सृजित पात्र जंगली बहू वास्तविक जीवन में हरिजन और महिला कोटे से पंचायत का चुनाव जीतकर हर अन्याय का प्रतिकार करती हैं। यह चरित्र लेखक की कल्पना से आगे बढ़कर वास्तविक जीवन में इतना जुझारू हो जाती है कि लेखक को भी पुनर्जीवित कर देती है और दोरों क दूसरे के लिए प्रेरणास्त्रोत बन जाते है। धावक कहानी के भंबल दा हो या आरोहण का भूपसिंह, ऐसे सच्चे ईमानदार और साहसी व्यक्तित्व है जो अपनी जिजिविषा और खुद्दारी के कारण हिंदी साहित्य के अविस्मरणीय चरित्र बन गये है। प्रेतमुकित कहानी का जगेसर,मदद का मेवालाल, अपराध का शचिन, कदर का बोदा, धनुष टंकार की सुरसती ऐसे ही पात्र हैं जो भ्रष्ट व्यवस्था, सांप्रदायिकता, अन्याय एवं अत्याचार के खिलाफ संघर्षरत है।

13. आरंभिक कहानियों में नक्सली आंदोलन से प्रभावित दिखते हैं। अपराध जैसी

कहानियां पढ़ने के बाद कहीं भी नक्सलियों से नफ़रत या घृणा नही होती है अपितु उल्टे उनके प्रति सहानुभूति जागृत होती है। 'अपराध' कहानी में वे नक्सलपार्टी का समर्थन करते हुए व्यवस्था को कटघरे में खड़ा करते हैं परंतु 'पूत-पूत! पूत-पूत!!' कहानी में वे पार्टी को खुद कटघरे में खड़ा करते हैं।

14. किसानों की समस्याओं को लेकर लिखे गए अन्य उपन्यासों से 'फाँस' अलग है क्योंकि इसमें किसानी के साथ-साथ खेती यानी बीजवपन, बिनाई, गोड़ाई, कटाई की भी समस्या है। इसमें भारत के विभिन्न अंचलों के साथ केलिफोंनिया से लेकर चाइना तक की किसानों की समस्याएँ एकमेक हो गई हैं। आंचलिक भाषा ने उपन्यास में प्राण फूँक दिए हैं।

15. इनके कथा साहित्य के अध्ययन के दौरान मैंने पाया कि इनके कथा-साहित्य को किसी एक निश्चित परिपाटी में बाँध कर नहीं रखा जा सकता। कथाकार के स्पष्ट वर्गीय दृष्टिकोण के कारण कथा-साहित्य में दो वर्ग स्पष्ट हो जाते हैं जिसमें एक वर्ग उन पर एक निश्चित फार्मूले पर चलने का आरोप भी लगाता है, परंतु इनके कथा तत्व की यही विशेषता है। ये न ब्राह्मणवादी लेखक हैं, न दलित लेखक बल्कि सिर्फ और सिर्फ लेखक हैं।

16. इनकी कहानियाँ औरों से इस मायने में भी अलग हैं कि वे पात्रानुकूल अंग्रेजी, तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दों के प्रयोग करने से भी नहीं हिचकते हैं। वे साइंस को अपने कयि का विषय बनाते हैं।

17. मैंने पाया कि वे विज्ञान और समाज विज्ञान के समरूप विकास को देश और विश्व के लिए हितकारी मानते हैं।

18. मैंने पाया कि इनका फोकस निम्नवर्ग और मध्यवर्ग है, उच्चवर्ग का पक्ष अधिक उजागर नहीं हुआ है।

19. मैंने पाया कि इनकी कहानियों का महत्व कलात्मक दृष्टि से कम और समाजशास्त्रीय दृष्टि से अधिक है।